दैनिक जागरण

सोमवार, 21 दिसंबर, 2015 : मार्गशीर्ष शुक्ल 11, वि. 2072

स्वाभिमानी भी वही श्रेष्ठ है जो विनम्रता को प्रथम स्थान पर रखता है

बुनियादी सुधार का इंतजार

गुजरात में कच्छ के रण में आयोजित राज्यों के पुलिस प्रमुखों के सम्मेलन में प्रधानमंत्री ने यह जो कहा कि पुलिस को अपने कामकाज में संवेदनशील होना चाहिए उसकी जरूरत पहले भी जताई जा चुकी है। अतीत में अन्य मंचों से भी यह कहा जा चुका है कि पुलिस की कार्यप्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन आवश्यक हो गए हैं, लेकिन इन बातों पर संतोषजनक ढंग से अमल होता नहीं दिख रहा है। स्थिति यह है कि पुलिस सुधार को लेकर सुप्रीम कोर्ट के दिशा-निर्देश सामने आए एक दशक बीतने को है, लेकिन उन पर अमल नहीं हो पा रहा है। जिन चंद राज्यों ने सुप्रीम कोर्ट के दिशा-निर्देशों पर अमल का दावा किया है उन्होंने भी आधे-अधूरे ढंग से ही कदम उठाए है। ऐसा लगता है कि अब सुप्रीम कोर्ट भी इस पर गंभीरता से ध्यान देने की स्थिति में नहीं है कि उसके दिशा-निर्देशों का पालन क्यों नहीं हो पा रहा है? इन दिशा-निर्देशों के पालन में ढिलाई बरतने वाले राज्यों को कई बार फटकार लगाई गई, लेकिन स्थितियां जस की तस बनी हुई हैं। स्थितियों में तब तक कोई बदलाव नहीं होने वाला जब तक केंद्र सरकार राज्यों पर इसके लिए दबाव नहीं डालती कि वे पुलिस सुधारों पर गंभीरता से ध्यान दें। अच्छा हो कि पुलिस सुधारों के मामले में केंद्र शासित राज्यों की कार्यप्रणाली में आवश्यक परिवर्तन करके राज्यों के समक्ष एक नजीर स्थापित की जाए। राज्य सरकारें पुलिस सुधारों की दिशा में आगे बढ़ने में इसलिए हीलाहवाली कर रही है, क्योंकि वे पुलिस को पूरे तौर पर अपने नियंत्रण में रखना चाहती हैं और उन्हें सुप्रीम कोर्ट के दिशा-निर्देश इसमें बाधक दिख रहे हैं। पुलिस सुधारों पर अमल न करने के लिए उनके पास बहानों की कमी नहीं है।

बेहतर हो कि केंद्र सरकार राज्यों के साथ इस पर विचार-विमर्श करे कि पुलिस सुधारों में देरी क्यों हो रही है? इसी के साथ पुलिस को आवश्यक संसाधनों से लैस करने की दिशा में भी केंद्र सरकार और राज्यों के बीच समझबूझ कायम होने की आवश्यकता है। पुलिस की चुनौतियां लगातार बढ़ती चली जा रही हैं, लेकिन वह आवश्यक संसाधनों से लैस नहीं हो पा रही है। पुलिस संख्या बल के अभाव से भी जूझ रही है और आधुनिक हथियारों, तकनीक एवं अन्य अनेक जरूरी सुविधाओं की कमी से भी। इन कमियों को दूर करने का काम प्राथमिकता के आधार पर होना चाहिए। एक ऐसे समय जब पुलिस से अपेक्षाएं बढ़ती चली जा रही हैं तब इसका कोई औचित्य नहीं कि उसकी समस्याओं के समाधान में तत्परता का परिचय न दिया जाए। राज्यों के पुलिस प्रमुखों का यह सम्मेलन एक ऐसे समय हुआ जब आतंकवाद, साइबर क्राइम और आपदा प्रबंधन के साथ-साथ महिला सुरक्षा से संबंधित चुनौतियां बढ़ती चली जा रही हैं। यह लगभग तय है कि हाल-फिलहाल ये चुनौतियां यथावत रहने वाली हैं। ऐसे में यह आवश्यक है कि पुलिस की कार्यप्रणाली बदलने और उसे आवश्यक संसाधनों से लैस करने में देरी न की जाए। इस तरह के सम्मेलनों में पुलिस की कार्यप्रणाली के साथ-साथ उसकी मानसिकता में भी परिवर्तन की आवश्यकता जताई जाती है, लेकिन इसकी पूर्ति तब तक नहीं होने वाली जब तक वे लोग अपनी मानसिकता नहीं बदलते जो उस पर नियंत्रण रखते हैं।

डायल-100

मुख्यमंत्री का मानना है कि अत्याधुनिक पुलिस कंट्रोल रूम डायल-100 से समाजवादी पार्टी सरकार की छवि बदलेगी। कानून-व्यवस्था के मोर्चे पर यह एक बड़ी सफलता की आधारशिला है। इस विचार से असहमति का कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं है। प्रदेश में अखिलेश के नेतृत्व वाली समाजवादी सरकार के करीब चार साल पूरे होने को हैं। इस दौरान सरकार के बारे में जनता की राय मिलीजुली रही है। मेट्रो, एक्सप्रेस-वे, टूरिज्म सर्किट, जीडीपी में बढ़ोतरी आदि कुछ ऐसे प्रयास हैं जिनके लिए सरकार को बोनस अंक दिये जा सकते हैं लेकिन कानून-व्यवस्था का मोर्चा ऐसा रहा है जहां सरकार की खूब किरकिरी हुई। अब भी हो रही है। यह कहना कि आधुनिक कंट्रोल रूम बन जाने से अपराध तत्काल नियंत्रित हो जाएंगे, थोड़ा मुश्किल है लेकिन दावे के अनुरूप ढांचा तैयार होकर काम करना शुरू कर देता है तो निश्चित ही भविष्य में इसके सार्थक परिणाम भी सामने आएंगे।

मुख्यमंत्री ने शनिवार को जिस डायल-100 परियोजना का शिलान्यास किया है, वह विश्व में अपनी तरह का पहला इतना बड़ा नेटवर्क होगा। ऐसा नहीं है कि यह नेटवर्क बनाने का अचानक कोई विचार आया। इस पर सरकार लंबे समय से होमवर्क कर रही थी। कई देशों के आधुनिक नेटवर्कों का अध्ययन किया गया और इसके बाद इसके स्वरूप का निर्धारण किया गया है। 2325.33 करोड़ रुपये की लागत वाली इस परियोजना में 33 हजार लोग काम करेंगे। यह कंट्रोल रूम अमेरिका की डायल 911 के तर्ज पर काम करेगा। प्रतिदिन करीब दो लाख कॉल सुनी जाएंगी और एक शिकायत पर करीब 750 रुपये का खर्च आएगा। संसाधनों पर खास जोर दिया गया है। डायल-100 में गुहार लगाने के बाद 15 मिनट के भीतर शहरों में और बीस मिनट के भीतर ग्रामीण अंचलों में पुलिस सहायता पहुंचाने के लिए 2500 बोलेरो, 700 इनोवा व 1600 पल्सर गाड़ियां रहेंगी। अपराधों पर शोध के लिए विशिष्ट विश्लेषण एवं अनुसंधान केंद्र का भी निर्माण होगा। दावा है कि सात महीने में यह परियोजना शक्ल ले लेगी। विचार करें तो कोई भी नागरिक वास्तविक सुरक्षा और सुरक्षा के अहसास की दो भिन्न मनोदशा में जीता है। नागरिकों को भरोसा हो जाए कि तय समय में पुलिस उसकी सहायता को पहुंच जाएगी तो यह बड़ी उपलब्धि होगी। 1090 की तरह यह कंट्रोल रूम भी सुरक्षा का अहसास करा सकता है। इससे अपराधियों का मनोबल भी टूटेगा। फिलहाल, इसके लिए शुभकामनाओं के साथ उम्मीद की जानी चाहिए और नतीजे का इंतजार।

विपक्ष की राजनीति

मोदी सरकार के खिलाफ विपक्षी दलों, विशेषकर कांग्रेस की आक्रामकता को अस्तित्व की लड़ाई के रूप में देख रहे हैं स्वप्न दासगुप्ता

अगर आइडिया आफ इंडिया का उपहास उड़ाने वाली और हमारे लोकतंत्र को खतरे में डालने वाली असहिष्णुता की लहर वाकई चल रही होती तो दीपावली के बाद अचानक यह खतरा हवा में कैसे उड़ गया? यह वह सवाल है जो मुझे तभी से हैरान किए हुए है जब से कथित असहिष्णुता का मुद्दा न केवल अखबारों के पहले पन्ने से गायब हो गया है, बल्कि अटपटी टेलीविजन बहसों का भी विषय नहीं रह गया है। यह यकीन करना वाकई बहुत मुश्किल है कि इतना गंभीर खतरा शुद्ध रूप से मौसमी साबित हुआ। अगर खतरा वाकई बुनियादी होता तो क्या साहित्य अकादमी की केवल एक बहुप्रतीक्षित बैठक अथवा संसद में एक जीवंत (और अबाधित भी) बहस से ही समाप्त हो जाता? असहिष्णुता का मुद्दा क्यों समाप्त हो गया, हो सकता है कि इस सवाल का जवाब बिहार विधानसभा चुनाव के नतीजों में निहित है। कुछ षड्यंत्रकारी महसूस होने का खतरा उठाकर भी मैं यह कहना चाहूंगा कि गोमांस और असहिष्णुता पर समूचा तूफान राजनीतिक विपक्ष का कद बढ़ाने तथा सत्ताधारी भाजपा को नागरिक स्वतंत्रता और अल्पसंख्यकों की असुरक्षा से संबंधित एक कहीं अधिक बुनियादी सवाल के कठघरे में खड़ा करना था। अगर वाकई यह उद्देश्य था तो यह कहना होगा कि यह सभी उम्मीदों से ज्यादा सफल रहा। भाजपा को एक ऐसे एजेंडे के समक्ष बैकफुट पर धकेल दिया गया जिस पर उसका कोई नियंत्रण नहीं था। इसके साथ ही शानदार स्तर तक विपक्षी एकता का लक्ष्य भी हासिल कर लिया गया।

भाजपा और 2014 के आम चुनाव में हाशिये पर धकेल दिए गए दलों ने बिहार के चुनावों के साथ बहुत महत्व चस्पा कर दिया था। भाजपा के लिए बिहार में जीत या कम से कम अच्छा प्रदर्शन दो कारणों से आवश्यक था। एक, यह स्थापित करना आवश्यक था कि मोदी पर केंद्रित 2014 का विजय रथ पूरी तरह रुका नहीं है। दूसरे, 2014 की तरह भाजपा यह साबित करना चाहती थी कि राजनीतिक केमेस्ट्री चुनावी अंकगणित पर हावी हो सकती है। भाजपा के रणनीतिकार इस धारणा के आधार पर आगे बढ़े कि जनता दल (यू), राजद और कांग्रेस के वोट महागठबंधन में इतनी आसानी से एक साथ नहीं मिल सकेंगे।

दोनों धारणाएं कमजोर साबित हुईं। मोदी अभी भी बहुत ही लोकप्रिय शख्सियत हैं, जैसा कि उनकी चुनावी सभाओं में प्रदर्शित हुआ, लेकिन एक विधानसभा का चुनाव लोकसभा का चुनाव नहीं होता और प्रधानमंत्री का राष्ट्रीय कद उस सम्मान से पार नहीं पा सका जो नीतीश कुमार को एक दशक के अच्छे प्रशासन के फलस्वरूप मिला है। विचित्र यह रहा कि भाजपा ने बिहार को लालू के जंगलराज से उबारने के लिए नीतीश कुमार के सहयोगी दल के रूप में जो भूमिका अदा की थी उसका श्रेय न मांगने का फैसला किया। इसके विपरीत उसने बिहार के फिर उसी हालात में फंसने का जो डर दिखाया उसके चलते लालू प्रसाद यादव के वोटर अपने नेता के पक्ष में डटकर खड़े हो गए। समूचे विपक्ष के लिए बिहार के नतीजों का सबसे बड़ा फायदा यह प्रमाण हासिल करना था कि जब भी भाजपा का सामना एकजुट चुनौती से होता है तो वह कमजोर नजर आती है। बिहार के मुख्यमंत्री, जिनकी पुरानी राष्ट्रीय महत्वाकांक्षा अब कोई रहस्य नहीं रह गई है, हर स्तर पर भाजपा विरोधी राजनीतिक एकता कायम करने में सबसे अधिक सक्रिय नजर आ रहे हैं। समझा जाता है कि वह खासकर असम में सक्रिय हैं। उनकी कोशिश असम में कांग्रेस, असम गण परिषद और बदरुद्दीन अजमल की यूएमएफए के बीच रणनीतिक समझबूझ कायम करना है। यह परियोजना बहुत चुनौतीपूर्ण है और संभव है कि धरातल पर न उतर सके, लेकिन जो चीज महत्वपूर्ण है वह यह कि हर उस राज्य में महागठबंधन जैसी राजनीतिक संरचना बनाने की गंभीर कोशिश हो रही है जहां भाजपा की सार्थक उपस्थिति है।

पर्दे के पीछे से हो रही इन कोशिशों का मकसद 2019 में भाजपा के समक्ष एकीकृत चुनौती रखना है, लेकिन इससे भी महत्वपूर्ण यह है कि इन कोशिशों में लगी शक्ति गैरकांग्रेसी है। बिहार में चुनाव प्रचार के दौरान नीतीश कुमार से एक साक्षात्कार में जब पूछा गया कि वह अचानक उस कांग्रेस के साथ कैसे आ गए जो कि राम मनोहर लोहिया के अनुयायियों के लिए ऐतिहासिक शत्रु रही है तो उनका जवाब था, 'लेकिन कांग्रेस कहां है'। हो सकता है कि उन्होंने मुख्य विपक्षी दल की क्षमता को कम करके आंका हो, लेकिन इससे उनकी इस धारणा का संकेत तो मिलता ही है कि कांग्रेस का पतन एक ऐसी राजनीतिक सच्चाई है जिससे बचा नहीं जा सकता। बावजूद इसके यह सोच भी है कि कांग्रेस के बिना कोई भी मजबूत गैरभाजपा समूह संभव नहीं है। अगर नीतीश कुमार का गुणा-भाग सही है तो क्या कांग्रेस ने अपनी दुर्दशा को समझ लिया है? क्या कांग्रेस एक ऐसे राष्ट्रीय गठबंधन में रह सकती है जहां वह सबसे वरिष्ठ सहयोगी न हो और जो राहुल गांधी को नेता के रूप में प्रस्तुत न करे? ऐसे संकेत हैं कि कांग्रेस अभी इस सवाल का सामना नहीं करना चाहती-कम से कम असम और पंजाब में विधानसभा चुनावों के पहले तो बिल्कुल नहीं। फिर भी यह तो साफ है कि कांग्रेस किसी ऐसे राजनीतिक संयोजन में खुशी महसूस नहीं करेगी जो गांधी परिवार की श्रेष्ठता को स्वीकार न करे। संसद में पूर्ण युद्ध की रणनीति अपनाकर कांग्रेस ने बुनियादी रूप से भाजपा विरोधी स्थान में सबसे बड़ा हिस्सा झटकने की कोशिश की है। कांग्रेस ने यह दर्शाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है कि वह राज्यसभा में विधेयक पारित होने देना तो दूर की बात है, बहस तक नहीं होने देगी। राज्यसभा में वह अभी भी सबसे बड़ी पार्टी है। कांग्रेस का मकसद एक संवैधानिक संकट खड़ा करना है, जिससे मोदी सरकार को नाकाम दर्शाया जा सके। निरंतर गतिरोध उत्पन्न कर कांग्रेस विपक्ष के बीच अपने नेतृत्व को भी स्थापित करना चाहती है। ज्यादातर क्षेत्रीय दल जीएसटी से संबंधित विधेयक के पक्ष में हैं। लेकिन कांग्रेस हंगामे का सहारा लेकर इस विधेयक पर मतदान को रोकना चाहती है। उसकी रणनीति मोदी सरकार को निष्प्रभावी दिखाने की है, जिससे कि प्रधानमंत्री की गंभीर और निर्णायक नेता की छवि में छेद किया जा सके।

राहुल गांधी का रवैया खतरे से खेलने वाला है। फिर भी वह दो कारणों से बच निकलने में कामयाब रहे हैं। एक, दूसरे विपक्षी दल अभी भी भाजपा विरोधी समूह में आंतरिक दरारों को बढ़ने-उभरने नहीं देना चाहते। वे यह देखकर खुश हैं कि मोदी को एक या दो पायदान नीचे ले आ जाया गया है। दूसरे, बिहार के नतीजों के बाद किए गए सभी प्रयासों के बावजूद एजेंडा अभी भी प्रधानमंत्री द्वारा तय नहीं किया जा पा रहा है। असहिष्णुता और बहुसंख्यकवाद की जानबूझकर पैदा की गई बहस का कुछ प्रभाव अभी भी मौजूद है। हैरानी की बात यह है कि कथित उदार वर्ग को संसद का कामकाज पूरी तरह ठप हो जाने पर भी कोई चिंता नहीं है। संसद का शीतकालीन सत्र पूरी तरह बर्बाद होने की ओर बढ़ रहा है। विधायिका को इस तरह पंगु कर देना कब तक जारी रहेगा? सरकार के दो वर्ष पूरे होने के पहले ही उसे पूरी तरह कुचल देने की रणनीति पर चल निकले राहुल गांधी ने सुधार-संवाद के लिहाज से अपने लिए बहुत कम जगह छोड़ी है। बड़ा सवाल यही है कि क्या उनके इस लापरवाह रवैये ने राष्ट्रीय एजेंडे की दिशा भी बदल दी है?

(लेखक प्रख्यात स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

भविष्य का सवाल

- **क्या कांग्रेस एक ऐसे राष्ट्रीय गठबंधन में रह सकती है जहां वह सबसे वरिष्ठ सहयोगी न हो और जो राहुल गांधी को नेता के रूप में प्रस्तुत न करे?**

असमानता की शिक्षा

इस वर्ष शिक्षा के संदर्भ में अदालतों के दो महत्वपूर्ण निर्णयों के बावजूद सुधार की संभावना पर संदेह जता रहे हैं जगमोहन सिंह राजपूत

शिक्षा व्यवस्था के संबंध में हर कोई अपनी राय न केवल रखता है, बल्कि उसे व्यक्त करने के लिए भी तत्पर रहता है। शिक्षा हर व्यक्ति तथा हर परिवार को किसी न किसी ढंग से प्रभावित अवश्य करती है। शिक्षा, उसकी विषयवस्तु तथा विधा समय के साथ गतिमान रहते हुए ही अपनी सार्थकता सिद्ध कर सकते हैं। इसमें देरी भी स्वीकार्य नहीं मानी जाती है। इसके लिए व्यवस्था तथा क्रियान्वयन में संलग्न सभी व्यक्तियों को सजग तथा नया सीखने के लिए प्रतिबद्ध होना आवश्यक होगा। उनकी नवाचार में रुचि तथा उसे कर सकने की स्वायत्तता मिलनी ही चाहिए। स्वतंत्र भारत में शिक्षा का जो विस्तार हुआ है उसे अभी और आगे जाना है। अनेक सराहनीय उपलब्धियां गिनाई जा सकती हैं, मगर देश की प्रगति की चिंता तो कमियों को पूरा करने तथा अस्वीकार्य प्रवृतियों के नियंत्रण की प्राथमिकता के आधार पर ही करनी होगी। अगर शिक्षा व्यवस्था में ही मूल्यों के ह्रास का घुन लग जाए तब समाधान ढूंढ़ना अत्यंत कठिन हो जाता है। हर व्यक्ति इससे परिचित है कि शिक्षा व्यवस्था प्रारंभ से ही दो हिस्सों में बंट गई है और आगे की पीढ़ियो को भी विभक्त कर रही है। इसका सबसे बड़ा कारण है नीति-निर्धारकों का स्वार्थ। आज भारत में 'पड़ोस का स्कूल' जैसी संकल्पना केवल वहीं बची है जहां माता-पिता के पास कोई अन्य विकल्प होता ही नहीं है। अमीरों के तबके की बात तो सदा ही अलग रहती है।

वर्तमान स्थिति मध्यवर्ग की बढ़ती संख्या से उपजी भी मानी जा सकती है। भौतिक संसाधनों को बढ़ाने की आवश्यकता की अनिवार्यता सभी स्वीकार करते हैं, मगर अच्छी गुणवत्ता वाली शिक्षा के लिए बहुत कुछ और भी चाहिए। कर्मठ, प्रशिक्षित, लगनशील, अध्ययनशील, संवेदनशील अध्यापक भी चाहिए जो अपने उत्तरदायित्व को अंतर्निहित कर चुके हों। ऐसे कर्मचारी चाहिए जो जानते हों कि अध्यापकों के साथ वे भी भारत की नई पीढ़ी को तैयार करने के पवित्र कार्य में भागीदारी कर रहे हैं। सरकारी तंत्र ने या तो इसे समझा नहीं या जानबूझकर नजरअंदाज कर दिया। निजी स्कूलों में बच्चों को प्रवेश दिलाने के लिए जो आपाधापी प्रतिवर्ष मचती है वह शिक्षा के द्वारा जुड़ाव की नहीं, अलगाव की कहानी कहती है। समाज के जिस वर्ग को अपने जीवन को ऊंचा उठाने के लिए शिक्षा ही एकमात्र उपाय दिखाई देती है उन्हें यह पूछने का अधिकार है कि उनके बच्चों के स्कूल निरीहता की स्थिति में क्यों रखे जा रहे हैं, जबकि सुविधा संपन्न वर्ग के लिए सरकारें आगे बढ़ के विशेष प्रावधान करने में हिचकती नहीं हैं।

2015 में न्यायालय के दो निर्णय भारत की शिक्षा व्यवस्था की वस्तुस्थिति का बड़ा सटीक वर्णन करते हैं। इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने उत्तर प्रदेश सरकार को आदेश दिया कि वे सभी लोग जो सरकारी कोष से वेतन पाते हैं, अपने बच्चों का प्रवेश सरकारी स्कूलों में कराएं। वे लोग जो शिक्षा की वर्तमान स्थिति को अंदर से जानते समझते हैं, इसे सही निर्देश मानते हैं, मगर साथ ही यह भी जानते हैं कि इसका लागू हो पाना असंभव है। निराशा की ऐसी स्थिति बन गई है कि अनेक दशकों से लोगों ने मान लिया है कि सरकारी स्कूलों का यही भाग्य है। यह भी सभी मानते हैं कि यदि यह निर्णय ईमानदारी से लागू कर दिया जाए तो तीन वर्ष के अंदर सरकारी स्कूलों की शक्ल बदल जाएगी। आज भी ऐसे लोग हैं जिन्होंने 1950-60 के बीच सरकारी स्कूलों की साख से परिचय पाया था तथा वहां की सशक्त कार्यशैली के वे आज भी मुरीद हैं। वे यह भी याद करते हैं कि उस समय गांधीजी की बुनियादी शिक्षा का प्रभाव बचा हुआ था और स्कूलों में बच्चे अनेक कौशलों से परिचय पा जाते थे। आज इस कमी को सभी मानते हैं और अलग से कौशल विकास के लिए व्यवस्थाएं की जा रही हैं। यदि स्कूलों में प्रारंभिक कार्य अनुभव देकर कौशलों में रुचि उत्पन्न कर दी जाती तो इस प्रकार की परियोजनाएं अधिक सफलता प्राप्त करतीं।

6 नवंबर 2015 को एक और निर्णय दिल्ली उच्च न्यायालय का आया है, जो सामान्य जन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। अनेक लोग इस तथ्य से परिचित नहीं हैं कि विशिष्ट वर्ग अपने स्वार्थ के लिए क्या क्या गुल नहीं खिलाता है। दिल्ली के चाणक्यपुरी में स्थित संस्कृति स्कूल में वरिष्ठ प्रशाशनिक अधिकारियों के लिए 60 प्रतिशत आरक्षण को दिल्ली उच्च न्यायालय ने निरस्त कर दिया है। इसे संविधान के अनुच्छेद 14 तथा 21 का उल्लंघन करता पाया गया। इस स्कूल को दिल्ली में चाणक्यपुरी जैसी जगह पर 7.78 एकड़ जमीन मुफ्त (एक रुपये प्रतिवर्ष के शुल्क पर) दे दी गई। यही नहीं इसे प्रारंभ करने के लिए 15.94 करोड़ की राशि भी सरकार ने दी थी। न्यायालय ने स्पष्ट कहा कि सरकार इस प्रकार के आरक्षण का संरक्षण नहीं कर सकती है। एक बड़ा प्रश्न उभरता है कि क्या प्रशासनिक अधिकारी संविधान के प्रावधानों से परिचित नहीं थे? वे सभी भारत के सरकारी स्कूलों की स्थिति भी जानते थे। तब यह राजे-महाराजे जैसा अलगाव तथा सामंतशाही पुनर्जीवित करने का प्रयास क्यों? शिक्षा में समानता के अवसर देने का प्रावधान तो भारत के संविधान में किया गया है। समतामूलक समाज के निर्माण का मूल आधार तो शिक्षा में समानता के अवसर देना ही है। फिर शीर्ष स्तर पर ऐसे असंवैधानिक कार्य क्या दर्शाते हैं? जिन्हें अनगिनत विशेषाधिकार प्राप्त हैं वे कैसे अपने कर्तव्य को ताक पर रखकर सीमित स्वार्थपूर्ण दायरे में घिरकर रह जाते हैं। समान स्कूल व्यवस्था को हमने भुला दिया है। अब लोगों को यही आशा है कि शिक्षा के प्रसार से जो जागृति पैदा हुई है वही आगे चलकर देश में समान स्कूल व्यवस्था जनमत के आधार पर लागू कराएगी।

(लेखक एनसीईआरटी के निदेशक रह चुके हैं)

response@jagran.com

एकमात्र उम्मीद

- **अब यही आशा है कि शिक्षा के प्रसार से जो जागृति पैदा हुई है वही आगे चलकर समान स्कूल व्यवस्था जनमत के आधार पर लागू कराएगी**

ऊर्जा

नियम पालन

ब्रह्मांड में जितनी आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक गतिविधियां हैं वे सारी नियमों के मुताबिक ही चलती हैं। मसलन, जैसे हम जलती आग पर अपनी हथेली रखेंगे तो हर हाल में जलेंगे ही। वह चाहे कोई बड़ा पैसे वाला रखे और चाहे निर्धन। वह चाहे भारत में रखी जाए या जापान में। पाश्चात्य दार्शनिक इमैनुअल कांट ने भी नियमों को सभी महत्वपूर्ण बातों का आधार माना है। विचारकों के मुताबिक जो मनुष्य नियमों का पालन करते हुए विचार करके कर्म करता है, वही वांछित परिणाम हासिल कर सकता है। आचार्य पतंजलि ने अष्टांग योग में सफलता हासिल करने के लिए नियमों का पालन करना जरूरी बताया है। इस तरह देखें तो नियम पालन ही जिंदगी का वह बेहतरीन फार्मूला है, जिस पर अमल करने से सारी दुनिया में अमन-चैन आ सकता है।

दरअसल नियम ही जीवन-चक्र है और जो नियम को नहीं समझता है और न उसका पालन करता है तो वह जिंदगी को भी नहीं समझ सकता है। समय और तत्व सब कुछ नियम से ही व्यवस्थित हैं। यदि सृष्टि के चक्र में एक सेकेंड का अंतर आ जाए तो पल भर में सब कुछ तहस-नहस हो सकता है। लोग यह मानते हैं कि ईश्वर सब कुछ कर सकता है, लेकिन यह चिंतन का विषय है कि ईश्वर भी नियम के खिलाफ कुछ नहीं कर सकता तो इंसान भला अहंकार और अज्ञानता के कारण नियम के विरुद्ध वांछित फल कैसे प्राप्त कर सकता है? आगे भी सृष्टि में जो विकास होगा वह सब कुछ पहले से निर्धारित नियम के मुताबिक ही होगा। दुनिया में जितने भी महापुरुष हुए हैं, सभी ने नियमों का पालन करके सृष्टि विकास को आगे बढ़ाया। जिंदगी को यदि एक पंक्ति में कहना हो तो कहेंगे कि नियम के मुताबिक पुरुषार्थ करते हुए लगातार संकल्पपूर्वक आगे बढ़ते जाने का नाम ही जिंदगी है। इसलिए योग दर्शन में नियम पालन करने पर विशेष जोर दिया गया है। नियम का पालन करने से कमजोर बुद्धि वाला व्यक्ति भी सफल हो जाता है और पालन न करने से बुद्धिमान और शक्तिशाली भी असफल हो जाते हैं। विज्ञान और धर्म दोनों का मूलाधार नियम ही हैं। इसलिए नियम का पालन हर हाल में करना चाहिए।

- **शकुंतला देवी**

जागरण Junction — AAPKI AWAAZ, AAPKA BLOG — www.jagranjunction.com

अपार संभावनाओं का क्षेत्र

किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था में कृषि, उद्योग व सूचना प्रौद्योगिकी के साथ-साथ एक और क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान होता है और वह है पर्यटन। भारत की झरनों व नदियों से भरपूर प्राकृतिक खूबसूरती, पारंपरिक मेले, सामानों से सजे बाजार, ऐतिहासिक इमारतें, प्राचीन विरासत, कहीं रेगिस्तान तो कहीं समुद्र सैलानियों को अपनी ओर लुभाता है। पर्यटन की दृष्टि से भारत के पास विशाल विकल्प मौजूद है। अतिथि देवो भव का भाव हमें बचपन से ही सिखाया जाता है। अतुल्य भारत का भाव लिए भारत जैसे सांस्कृतिक, भौगोलिक विविधता वाले देश में पर्यटन की असीम संभावनाएं हैं। अपार संभावनाएं समेटे हुए पर्यटन क्षेत्र के प्रति सरकार को ध्यान देने की आवश्यकता है। भारत विश्व की प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में से एक है और आंकड़े कहते हैं कि 60 देशों में सबसे ज्यादा विदेशी मुद्रा की कमाई पर्यटन से ही होती है। भारत के पास अपार अवसर उपलब्ध हैं। बस देरी है तो अवसर को कार्य मे परिवर्तित करने की। **- लोकेश सिंह**

पूरा ब्लॉग पढ़ने के लिए यथावत टाइप करें : http://bit.ly/1PaLrTg

इंटरनेट की बदलती पटरी

अभी बहुत ज्यादा दिन नहीं हुए कि देश भर में कुछ हद तक मुफ्त इंटरनेट की सुविधा देने की कवायद पर जमकर हो-हल्ला मचा था। इंटरनेट डॉट ओआरजी नामक इस प्रोग्राम को नेट न्यूट्रिलिटी से जोड़कर तब एक अभियान शुरू किया गया और कहा गया कि इंटरनेट की सुरक्षा और स्वायत्तता पर खतरा मंडरा रहा है और अगर लोगों को इंटरनेट मुफ्त में मिल गया तो बिजनेस मॉडल खतरे में पड़ जाएगा। सोचने की बात है कि दो अरब तक लोगों की इंटरनेट तक पहुंच है और दुनिया भर में एक बड़ी क्रांति सी आ गई है। सोशल मीडिया, फोन एप्लिकेशंस और एक से बढ़कर एक टेक कंपनियों ने अपना भविष्य बनाया और बढ़ाया है। ऐसे में अगर बाकी बचे चार अरब लोगों तक भी इंटरनेट की पहुंच हो जाती है तो आज से भी अधिक चमकीले भविष्य की सहज ही कल्पना की जा सकती है। **- मिथलेश**

पूरा ब्लॉग पढ़ने के लिए यथावत टाइप करें : http://bit.ly/1TTQKYe

---

पाठकनामा

pathaknama@nda.jagran.com

समाधान का इंतजार

समस्या बनी संसद शीर्षक से लिखे लेख में सुभाष कश्यप ने संसद खासकर राज्यसभा में निरंतर गतिरोध और स्थगन की समस्या पर विचार करते हुए सभी दलों से संविधान की मूल भावना के अनुरूप काम करने की बात कही है। इस क्रम में उन्होंने राज्यसभा की शक्तियों को कम किए जाने के बारे में संसद के साथ-साथ राष्ट्रीय स्तर पर बहस की जरूरत भी जताई और यह भी कहा कि फिलहाल इसकी संभावना नहीं है। उन्हें यह भी स्पष्ट करना चाहिए था कि गतिरोध की वर्तमान स्थिति को खत्म करने के लिए क्या तरीके अथवा विकल्प हो सकते हैं। क्या इसमें राष्ट्रपति की कोई भूमिका हो सकती है, क्योंकि देखने में यही आ रहा है कि संसद राजनीतिक कटुता का अखाड़ा बनती जा रही है। आखिर कब तक संसद बिना किसी ठोस कामकाज के ऐसे ही स्थगित होती रहेगी। संवैधानिक विशेषज्ञों को ही इस बारे में बहस छेड़नी होगी।

रचना मिश्रा, दिल्ली

आत्मचिंतन करें

शनिवार को पटियाला कोर्ट से जमानत मिलने के बाद सोनिया गांधी और राहुल गांधी ने मोदी सरकार पर आरोप लगाने शुरू किए और कांग्रेसियों ने मोदी को आत्मचिंतन करने की सलाह दी। वहीं भाजपाई भी भला कहां पीछे रहने वाले थे। उन्होंने भी कांग्रेसियों को भ्रष्टाचार से कमाई दौलत और उस पर कोर्ट कचहरी पर टीका टिपण्णी करने पर आत्मचिंतन करने की सलाह दे डाली। लेकिन लाख टके का सवाल कि आत्मचिंतन आखिर करे कौन ? अरहर की दाल ही नही बल्कि सारी डालें दो सौ रुपया किलो के आस पास बिक रहीं हैं। 2015 की शुरुआत दिल्ली विधान सभा चुनाव से हुई और बिहार विधान सभा चुनाव के साथ -साथ लोकसभा उपचुनाव पर खत्म हुई और इन सारे चुनावों में भाजपा की नींव सरक गयी। लोकलुभावन बातें टीवी सीरियल और फिल्मों में ही ठीक लगती हैं, लेकिन हकीकत में तो जमीनी काम ही काम आता है और भाजपा सांसद या तो दुकानों मकानों के उद्घाटन में दिखते हैं या फिर न्यूज चैनलों में लेकिन आम जनता को नहीं?

mumtajbeg@gmail.com

दिल्ली में झुग्गियां क्यों ?

तेजी से बढ़ती जनसंख्या और घटती जन सुविधाओं से निकट और दूर प्रांतों और पड़ोसी देश विशेषकर बांग्लादेश ,नेपाल और पाकिस्तान आदि से लोग दिल्ली जैसे सुविधा संपन्न महानगरों में सरकारी भूमि पर अवैध कब्जा करके पिछले कई दसकों से बस रहे हैं। इससे इन नगरों की स्थिति और खराब होती है। इन झुग्गियों के बसाने के पीछे भ्रष्टाचार, वोट की राजनीति और माफिया के धन -बल का ही बड़ा हाथ होता है। इन असख्य झुग्गियों से हजारों एकड़ सरकारी और सार्वजनिक भूमि कब्जाई जा चुकी है जबकि इस तरह से बसे इन लोगों के पास तो अपनी जन्मभूमि में घर ,परिवार, खेत -खलिहान और जमीन -जायदाद आदि सब कुछ होता है। इनके पुनर्वास के लिए सरकार को अलग से भूमि के अलावा इन्हें बिजली ,पानी और बस सेवा आदि अन्य सुविधाएं मुफ्त में और बड़ी छूट के साथ यहां अलग से देती है। इसका सारा बोझ मध्यम वर्ग पर ही पड़ता है जोकि सरासर अन्याय है। झुग्गी वाले को मकान देने से पहले माली हालत की जांच की जानी चाहिए।

-वेद मामूरपुर ,नरेला।

नेताओं को प्रशिक्षण

राजनीतिक पार्टियों को लोकतंत्र का प्राण कहा गया है। सत्ता के लिए चुनाव में दो-दो हाथ करने वाले उम्मीदवारों के लिए न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता निर्धारित करने को लेकर लम्बे समय से बहस चल रहे हैं। पूर्व निर्वाचन आयुक्त एस वाई कुरैशी ने माना है कि राजनीतिक दल अपने अकूत संपत्ति का प्रयोग अप्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक कार्यों में करते हैं और चुनाव खर्चों में इसका जिक्र नहीं करते। वर्तमान में नेशनल हेराल्ड मामले में कांग्रेस के शीर्ष नेतृत्व पर जो संकट के बदल मंडरा रहे हैं, इसका ताजा उदहारण है। दलों को चाहिये कि वे नवनिर्वाचित जन प्रतिनिधि को राज व्यवस्था और संविधान की जानकारी प्राप्त कराने के लिए एक प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन करें।

info.raviraushan@gmail.com

जनपथ

संसद में कानून का जो करते निर्माण,
कैसे कर पाएं भला जनता का कल्याण।
जनता का कल्याण लड़ेंगे जब सातों दिन,
साधेंगे निज स्वार्थ बैठ संसद में पल-छिन।
शर्मनाक है बंधु आज की घटना बेहद,
रिहा हो गया दैत्य न कुछ कर पाई संसद।

-ओमप्रकाश तिवारी।

ट्वीट ट्वीट

**अरब परिधान पहनने वाले भारतीय मुस